ICSSR Sponsored

ISSN: 2319-9997

*Journal of Nehru Gram Bharati University, 2024; Vol. 13 (2):157-162*

# बी0एड0 संचालित संस्थानों में भौतिक संसाधनों का महत्व

**विवेक कुमार एवं अवधेश कुमार**
शिक्षक–शिक्षा विभाग,
नेहरू ग्राम भारती मानित् विश्वविद्यालय
कोटवा–जमुनीपुर–दुबावल, प्रयागराज (उ0प्र0)

*Received:23.10.2024* *Revised:30.11.2024* *Accepted:12.12.2024*

**सारांशः**
वर्तमान बदलते भौतिक परिवेश में जहाँ मानवीय मूल्यों में निरन्तर गिरावट आ रही है और शिक्षा का स्तर अपने निम्नतम स्तर की ओर बढ़ रहा है। ऐसे में इन बातों पर ध्यान देना आवश्यक है कि कौन से वे कारक है जो सम्पूर्ण शैक्षिक प्रणाली को प्रभावित कर रहे है। सरकारी नीतियों के चलते वर्तमान में ऐसे विभिन्न शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थान खुल गये है जो निर्धारित मानक को नही प्राप्त करते, उनके विकास व गुणवत्ता की बात तो दूर के ढोल सुहाने जैसी कहावत को साकार करते है। ऐसे में इन संस्थानों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे प्रशिक्षणार्थियों के विभिन्न दृष्टिकोणों को जानना आवश्यक है जिससे सम्बन्धित संस्थान उच्च कमियों या विशेषताओं को ध्यान में रखकर अपनी गुणवत्ता में गुणात्मक विकास कर सके।

**मुख्य शब्द**– बी0एड0, संस्थान, भौतिक संसाधन, महत्व

## प्रस्तावना

किसी भी राष्ट्र के चतुर्दिक विकास के लिए शिक्षा एक सशक्त साधन है चाहे वह वैज्ञानिक हो अभियांत्रिकी हो अथवा साहित्य कला से संबंधित हो सभी का एकमात्र उद्देश्य शिक्षित व्यक्ति की शारीरिक एवं मानसिक उन्नति द्वारा उसे योग्य नागरिक बनाकर राष्ट्र के बहुमुखी विकास में योगदान प्रदान करना होता है। अपने राष्ट्र में भी शिक्षा के प्रसार हेतु नित्य नए नए प्रयोग हो रहे हैं, ऐसा नहीं है कि यह प्रयोग अभी कुछ दिनों पहले शुरू हुए हैं, अगर अतीत में देखा जाए तो हमारी वैदिक संस्कृति, बौद्ध संस्कृति, जैन संस्कृति, उत्तर वैदिक संस्कृति जैसे तमाम संस्कृतियों में शिक्षा के अलग–अलग और समृद्ध रूप दिखाई देते हैं।

प्राचीनकाल से ही समाज में अपने भावी नागरिकों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आध्यात्मिक तथा अन्य सभी प्रकार के विकास करने का कार्य अध्यापकों को सौंपने की परम्परा रही है। अध्यापक का कार्य ज्ञान व संस्कृति के संरक्षण तथा हस्तान्तरण तक ही सीमित नहीं है बल्कि परिस्थितियों के अनुरूप आवश्यक सामाजिक

परिवर्तन भी लाना हैं परन्तु अध्यापक शिक्षा प्राचीनकाल से लेकर मध्यकाल तक उपेक्षित ही रही। परन्तु ब्रिटिश काल में अध्यापक शिक्षा का महत्व बढ़ा।

सन् 1882 में हन्टर आयोग ने अध्यापक प्रशिक्षण के सम्बन्ध में अनेक महत्वपूर्ण सुझाव दिये, जिनके फलस्वरूप 19वीं शताब्दी के अन्तिम वर्षों में अनेक प्रशिक्षण विद्यालय तथा महाविद्यालय खुले। सन् 1904 में लार्ड कर्जन ने अपने प्रस्ताव में अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाओं की संख्या में वृद्धि करने प्रशिक्षण की गुणवत्ता को बढ़ाने, स्नातक से कम योग्यता वाले प्रशिक्षणार्थियों के लिए दो वर्षीय तथा स्नातकों के लिए एक वर्षीय प्रशिक्षण पाठ्यक्रम प्रारम्भ करने प्रशिक्षण महाविद्यालयों से अभ्यासात्मक विद्यालय सम्बन्धित करने तथा प्रशिक्षण के दौरान सैद्धान्तिक व व्यवहारिक दोनों पक्षों का ज्ञान देने जैसे सुझाव भी रखे। इन सुझावों का अध्यापक प्रशिक्षण के विकास पर व्यापक प्रभाव पड़ा तथा अध्यापक प्रशिक्षण के आन्दोलनों को नवीन शक्ति मिली। 20वीं शताब्दी के प्रथम कुछ दशकों में प्रशिक्षण संस्थाओं की संख्या में आशातीत वृद्धि हुई। इसके बाद सन् 1929 में हर्टोग समिति ने प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण पर अधिक बल देने, प्रशिक्षण की अवधि बढ़ाने, अध्यापकों के लिए अभिनव पाठ्यक्रम प्रारम्भ करने तथा अध्यापकों की सेवा शर्ते सुधारने जैसे सुझाव दिये। सन् 1937ई0 में बम्बई विश्वविद्यालय ने एम0एड0 पाठ्यक्रम प्रारम्भ कर दिया। सन् 1937 में वुड एक्ट प्रतिवेदन तथा सन् 1944 में सार्जेन्ट रिपोर्ट में भी अध्यापक प्रशिक्षण के सम्बन्ध में अनेक सुझाव दिये।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् 1948 में गठित राधाकृष्णन आयोग ने सैद्धान्तिक व पुस्तकीय ज्ञान के स्थान पर अध्यापन अभ्यास पर अधिक बल देने का सुझाव दिया। सन् 1952 में गठित मुदालियर आयोग ने माध्यमिक शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों को दो वर्षीय तथा स्नातकों को एकवर्षीय प्रशिक्षण देने प्रशिक्षण महाविद्यालयों के साथ प्रदर्शनात्मक विद्यालयों की व्यवस्था करने तथा सेवारत अध्यापकों को प्रशिक्षण के लिए सवेतन अवकाश व निःशुल्क प्रशिक्षण देने की सिफारिश की तथा सन् 1961 में भारत सरकार ने शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद का गठन किया। परिषद ने उत्तरी क्षेत्र (जम्मू व कश्मीर, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, दिल्ली) के लिए (अजमेर में पूर्वी क्षेत्र बिहार, उड़ीसा, असम, पश्चिम बंगाल, मणिपुर, त्रिपुरा) के लिए भुवनेश्वर में पश्चिम क्षेत्र (आन्ध्र प्रदेश, मैसूर, तमिलनाडु, केरल) के लिए मैसूर में चार क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय स्थापित किये है। ये महाविद्यालय एक वर्षीय बी0एड0 व एम0एड0 पाठ्यक्रम, चार वर्षीय बी0एड0 एकीकृत पाठ्यक्रम, सेमीनार, कार्यशाला आदि का आयोजन करते है।

सन् 1963–64 में विभिन्न राज्यों में राज्यशिक्षा संस्थान की स्थापना की गई, जो सेवाकालीन प्रशिक्षण, शिक्षण सामग्री व पाठ्यपुस्तकों में सुधार तथा शिक्षा के विकास के लिए परामर्श देने का कार्य करते है। सन् 1964–66 में कोठारी आयोग ने राज्यों में अध्यापक शिक्षा परिषद् गठित करने प्रशिक्षण पाठ्यक्रम को भारतीय परिस्थितियों के अनुरूप ढ़ालने, प्रशिक्षण संस्थाओं में प्रसार सेवा विभाग खोलने, अभ्यास शिक्षण के लिए पूर्णकालिक इन्टर्नशिप की व्यवस्था करने तथा प्रशिक्षण संस्थाओं में कार्यरत अध्यापकों के लिए ग्रीष्म कालीन अभिनव पाठ्यक्रम स्तर को बनाए रखने के लिए अध्यापक शिक्षा परिषद की संकल्पना की जा चुकी थी। सन् 1982 में भारतीय शिक्षकों एवं अध्यापक शिक्षा के सम्बन्ध में सदैव स्मरणीय रहेगा।

इस वर्ष 5 सितम्बर अर्थात् अध्यापक दिवस पर भारत सरकार ने अध्यापक व्यवसाय के उद्देश्यों, अध्यापकों की भूमिका, अध्यापकों के प्रशिक्षण, अध्यापक कल्याण, अध्यापकों के लिए आचार संहिता अध्यापकों की स्थिति के सम्बन्ध में अध्ययन करने तथा परामर्श देने के लिए दो आयोगों–अध्यापकों के लिए राष्ट्रीय आयोग प्रथम व द्वितीय का गठन किया।

भारत सरकार द्वारा सन् 1986 में घोषित राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार प्रत्येक जिले में जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान खोलने का प्राविधान किया गया है। इसके अधिकतर अध्यापक शिक्षा महाविद्यालयों को सुदृढ़ करके उनमें से कुछ को शिक्षा में उच्च अध्ययन संस्थान के रूप में विकसित करने का विचार है। तथा इसके कुछ वर्गो के पश्चात् संसद के द्वारा सन् 1993 में पारित अधिनियम के आधार पर राष्ट्रीय अध्याापक शिक्षा परिषद का गठन किया गया है। अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता बनाए रखने की दिशा में यह एक सार्थक प्रयास सिद्ध हो सकता है। अध्यापक शिक्षा का विचार नवीन न होकर प्राचीन अवश्य है परन्तु अध्यापक शिक्षा के कार्यक्रम में परिवर्तन एवं उपयोगिता में प्रतिदिन वृद्धि होती जा रही है। इस प्रशिक्षण की उपयोगिता वर्तमान शिक्षा उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायता प्रदान करना है।

स्वतंत्रता से पूर्व एवं स्वतंत्रता के पश्चात शिक्षकों के निर्माण एवं प्रशिक्षण की प्रक्रिया कमोवेश एक ही प्रकार के रही है। शिक्षण प्रशिक्षण संस्थानों के प्रकार भी अलग–अलग हैं। भारतीय प्रदेश में शिक्षक प्रशिक्षण प्राप्त संस्थानों के आमतौर पर दो प्रकार पाए जाते हैं एक तो ऐसे संस्थान है जिनके लिए सरकार वित्तीय सुविधाएं उपलब्ध कराती हैं जिन्हें वित्तपोषित शैक्षिक प्रशिक्षण संस्थान कहा जाता है तो दूसरी तरफ ऐसी संस्थाएं भी कार्यरत हैं जिनके लिए सरकारें किसी भी प्रकार की वित्तीय मदद, सुविधाएं उपलब्ध नहीं कराती है ऐसी संस्थाएं अपने शैक्षणिक एवं प्रशिक्षण कार्यक्रमों हेतु समस्त वित्तीय व्यवस्थाएं स्वयं अपने प्रयासों से उपलब्ध करती हैं और उसका उपयोग करते हैं, सरकारें सिर्फ उनकी मॉनिटरिंग का काम करते हैं इन दोनों ही प्रकार के संस्थाओं में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे शिक्षक प्रशिक्षकों की विभिन्न विशेषताओं को जाना आवश्यक है। दोनों प्रकार के संस्थाओं में ऐसे शिक्षक जिनका कार्य शिक्षकों का निर्माण करना है अर्थात जो शिक्षक प्रशिक्षक हैं, वह किन देशों में कार्य करते हैं किस प्रकार की सुविधाओं का प्रयोग करते हैं और किस प्रकार की सुविधाएं उन्हें उपलब्ध हो पाती हैं। पूर्व शोध अध्ययन से इंगित होता है कि प्रत्येक देशों में विद्यालयों की भूमिका और कार्य दिन–प्रतिदिन बदल रहे है लोगों के जीने का ढंग बदल रहा है ऐसे में पूर्व में प्राप्त प्रशिक्षण पुराना हो जाता है नये प्रषिक्षण की आवष्यकता उत्पन्न हो जाती है। (सिंह, 2012)

शिक्षकों के गुणवत्तायुक्त प्रशिक्षण हेतु गुणवत्तायुक्त विद्यार्थियों के चयन के मापदण्डों में परिवर्तन की आवश्यकता है साथ एक आदर्श स्कूल के साथ–साथ शिक्षक– प्रशिक्षण संस्थानों में संसाधनों की कमी है जिसके कारण अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता प्रभावित होती है। (सिंह, 2014). शिक्षक शिक्षा में गुणवत्ता लाने के लिए कर्त्तव्यनिष्ठ, योग्य क्षमतावान शिक्षक तैयार करने होंगे इसके लिए शिक्षक–प्रशिक्षण को प्रभावी बनाने, शिक्षण में नवाचार पद्धतियाँ विकसित करने सहित परीक्षण की व्यापक प्रविधियाँ तय कर उन्हें व्यवहारिक रूप में लागू करने हेतु कदम उठा जाये।

(दुबे एवं उदय, 2016).

यह एक शोध का विषय है यह एक स्थापित सत्य है की परिस्थितियाँ बदल जाने पर परिणाम बदल जाते हैं। प्रस्तुत अनुसंधान में दो विभिन्न परिस्थितियों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों के कुछ विशेषताओं को जानने एवं उनकी आपस में तुलना करने का प्रयास किया गया है।

दोनों ही प्रकार की संस्थाओं में अध्ययनरत भावी शिक्षकों के लिए उपलब्ध परिस्थितियां भिन्न होने पर किस प्रकार के परिणाम प्राप्त होते हैं। यह जानने की छोटी सी कोशिश प्रस्तुत अनुसंधान के द्वारा की जा रही है।

**शिक्षण प्रशिक्षण संस्थानों में सुविधायें**

सुविधाओं में मूलतः 2 प्रकार की सुविधायें आती हैं।

1. भौतिक सुविधायें
2. मानवीय सुविधायें

3 भौतिक सुविधायें–

शिक्षक–प्रशिक्षण कार्यक्रम को संज्ञान में रखते हुए यदि देखा जाये तो भौतिक सुविधाओं के अन्तर्गत निम्न महत्वपूर्ण बिन्दु सम्मिलित होते हैं–

1. उचित भवन– किसी भी विद्यालय सर्वाधिक महत्वपूर्ण आवश्यकताओं में विद्यालय भवन का उचित स्वरूप होना अतिआवश्यक है। विद्यालय भवन अच्छा होना चाहिए तथा खुला अर्थात स्वच्छ व हवादार होना चाहिए जिससे विद्यार्थियों को वातावरण से सामंजस्य बनाने में आसानी हो।
2. पुस्तकालय– विद्यालय में पुस्तकालय का होना अति आवश्यक है। बी0एड0 स्तर पर जहाँ विद्यार्थी विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण प्राप्त करता है तो ऐसे में उसे विभिन्न प्रकार की पुस्तकों की आवश्यकता महसूस होती है। ऐसे में पुस्तकालय उसका सर्वाधिक महत्वपूर्ण सहयोगी सिद्ध होता हैं
3. मनोविज्ञान प्रयोगशाला– बी0एड0 प्रशिक्षणार्थियों के लिए मनोविज्ञान प्रयोगशाला बहुत महत्वपूर्ण होती है, इसलिए सम्बन्धित संस्थान द्वारा इसको उपलब्ध कराया जाना अतिआवश्यक है।
4. भाषा प्रयोगशाला– उच्चारण सम्बन्धी दोष निवारण में भाषा प्रयोगशाला की अपनी एक महती भूमिका है। ज्यादातर प्रशिक्षण संस्थानों में इसकी कमी पायी जाती है।
5. शैक्षिक तकनीकी प्रयोगशाला– यह प्रयोगशाला भी प्रशिक्षणार्थियों के लिए आवश्यक है। शिक्षा जगत् में प्रयुक्त हो रहे नवीन तकनीकियों की जानकारी इसके माध्यम से प्राप्त होती है।

उपर्युक्त वर्णित भौतिक सुविधाओं के अलावा भी कई प्रकार की भौतिक सुविधायें आती है। इन सभी सुविधाओं का होना एक शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालय के लिए होना बहुत आवश्यक है।

## बी0एड0 संचालित संस्थानों में भौतिक संसाधनों का महत्व

वर्तमान अध्यापक–शिक्षा कार्यक्रम का यह एक बड़ा अपेक्षित पक्ष है। अधिकांश प्रशिक्षण संस्थानों में इन दिनों न तो यथेष्ट अध्यापकीय निरीक्षण– पर्यवेक्षण की व्यवस्था दिखाई पड़ती है न ही प्रशिक्षणार्थियों को इतना समय दिया जाता है कि वे

पाठ्य–विषयवस्तु के विधिवत् शिक्षण की पूर्व तैयारी कर सकें अथवा पाठ का समुचित समन्वयन कर सकें। वस्तु विश्लेषण के बारे में प्रायः शिक्षक अपने में सुस्पष्ट और विज्ञ नहीं होते। परिणाम यह होता है कि पूर्वाभ्यास के अभाव में प्रशिक्षु–अध्यापक विश्वासपूर्वक अपने शिक्षण का अभ्यास नहीं कर पाते। उसे वास्तविक शिक्षण–अभ्यास कक्षों में वहाँ के अध्यापकों का यथेष्ट सहयोग नहीं मिल पाता।

इसी भाँति अधिकांश शिक्षण–प्रशिक्षण संस्थाओं द्वारा प्रशिक्षु–अध्यापकों के निरीक्षण और मूल्यांकन के लिये किसी स्तरीय मापनी का प्रयोग नहीं किया जाता। उन्हें प्रतिपुष्टि करने के लिये तो अभी तक कोई सर्वमान्य मानक निर्धरित ही नहीं किया गया है। फलतः निरीक्षण कार्य प्रशिक्षु–अध्यापकों की रुचि और इच्छा पर तथा वस्तुनिष्ठता पर निर्भर न होकर, व्यक्तिनिष्ठ रह जाता है। ऐसी दशा में मूल्यांकन में वांछित पारदर्शिता नहीं रह पाती और उनके अपेक्षित शिक्षण व्यवहारों में सुधार नहीं हो पाता है। शिक्षक–शिक्षा और प्रशिक्षु के शिक्षण अभ्यास के बीच वस्तुतः इन दिनों उपयुक्त सामंजस्य नहीं दिखायी देता।

शिक्षक–प्रशिक्षण कार्यक्रम में शैक्षिक प्रशासन, शैक्षिक प्रक्रिया व शैक्षिक सुविधाओं आदि के सकारात्मक स्वरूप का होना अति आवश्यक है क्योंकि देश के शिक्षक–प्रशिक्षण कार्यक्रम के विकास व प्रशिक्षार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य के लिए यह आवश्यक है कि शैक्षिक–प्रशिक्षण संस्थाओं का संचालन व सुविधायें सुचारू रूप से हो। अच्छे प्रशासन, शैक्षिक प्रक्रिया व सुविधाओं के द्वारा ही शैक्षिक संस्थाओं की व्यवस्था, नीतियों का निर्धारण, नियोजन, संगठन एवं नियंत्रण किया जाता है।
इन सबके ऊपर उस संस्थान के प्रशिक्षणार्थियों का दृष्टिकोण कैसा है यह जानकर ही संस्थान अपनी व्यवस्था का निर्धारण करता है।

## निष्कर्ष–

वर्तमान बदलते भौतिक परिवेश में जहाँ मानवीय मूल्यों में निरन्तर गिरावट आ रही है और शिक्षा का स्तर अपने निम्नतम स्तर की ओर बढ़ रहा है। ऐसे में इन बातों पर ध्यान देना आवश्यक है कि कौन से वे कारक है जो सम्पूर्ण शैक्षिक प्रणाली को प्रभावित कर रहे है। सरकारी नीतियों के चलते वर्तमान में ऐसे विभिन्न शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थान खुल गये है जो निर्धारित मानक को नही प्राप्त करते, उनके विकास व गुणवत्ता की बात तो दूर के ढोल सुहाने जैसी कहावत को साकार करते है। ऐसे में इन संस्थानों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे प्रशिक्षणार्थियों के विभिन्न दृ ष्टिकोणों को जानना आवश्यक है जिससे सम्बन्धित संस्थान उच्च कमियों या विशेषताओं को ध्यान में रखकर अपनी गुणवत्ता में गुणात्मक विकास कर सके।

## सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

कटारिया, सुरेन्द्र (2009). प्रशासनिक सिद्धान्त, जयपुरः नेशनल पब्लिशिंग हाउस, पृ. 30।

कुमार, मनोज (2018). शिक्षक–शिक्षा में गुणवत्ता के मुद्दे, रिव्यू आफ रिसर्च, वा0 7, इश्शू–6, पृ0 1–8

जैदी, जफर इकबाल (2015). फैक्ट्र्स इफेटिंग एट्टीटूड टूवर्ड्स टीचिंग एण्ड इट्स कोरिलेटः रिव्यू आफ रिसर्च, इण्टरनेशनल जर्नल आफ एजुकेशन एण्ड

साइकोलोजिकल रिसर्च, वा0 4, इश्शू–1, पृ0 46–51

दुबे, प्रमिला एवं उदय, आशा (2016). शैक्षिक उन्नयन में व्यवहारिक पक्ष – अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता, इण्टरनेशनल रिसर्च जर्नल ऑफ मैनेजमेण्ट सोसियोलॉजी एण्ड ह्युमिनिट्ज, वा0 7, इश्शू–9, पृ0 59–64

प्यारी, आनन्द एवं राजश्री (2012). शिक्षण–अधिगम सहभागिता, एशियन जर्नल आफ एजुकेशनल रिसर्च एण्ड टेक्नोलॉजी, वॉ0 2(1), पृ0 109–117

मित्तल, कविता एवं राय, दिव्या (2017). अध्यापक शिक्षा में प्रशिक्षुता कार्यक्रमः प्रासंगिकता एवं चुनौतियाँ, इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ एप्लाइड रिसर्च, 3(7), 1037–1040

राय एवं मित्तल (2017). द्विवर्षीय अध्यापक शिक्षा में प्रशिक्षुता कार्यक्रमः सहयोगी विद्यालयीन शिक्षकों के प्रत्यक्षीकरण, इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ एडवांस एजूकेशन एण्ड रिसर्च, वॉ0 2, इश्शू–3, पृ0 277–281

सिंह, दिलावर (2014). अध्यापक शिक्षा में गुणवत्ता एवं आयोगों की अनुशंसाएँ, इण्टरनेशनल जर्नल आफ इन्फार्मेटिव एण्ड फ्युचरिस्टिक रिसर्च, वा0 1, इश्शू–12, पृ0 297–300

**Disclaimer/Publisher's Note:**

The statements, opinions and data contained in all publications are solely those of the individual author(s) and contributor(s) and not of JNGBU and/or the editor(s). JNGBU and/or the editor(s) disclaim responsibility for any injury to people or property resulting from any ideas, methods, instructions or products referred to in the content.